21 रमज़ान शहादत मौला अली

फ़रीद अहमद....

सहाबी-ए-रसूल ﷺ अम्र बिन आस ने चालाकी से काम लिया और जैसा फ़ैसला तय पाया था, उसके ख़िलाफ़ फ़ैसला सुनाते हुए कहा –

"अब मैं कहता हूँ कि मुआविया ख़लीफ़ा हैं। और मैं इनकी ख़िलाफ़त पर राज़ी हूँ, और मुआविया को ख़िलाफ़त पर बरकरार करता हूँ।"

इस तरह जंग-ए-सिफ़्फ़ीन का अंत हुआ। अमीर मुआविया जो कि मौला अली के मुकाबले में हारने के मुहाने पर खड़े थे, महफ़ूज़ हो गए। मौला अली के लश्कर के कुछ सिपाहियों ने अपनी ज़िद के आगे मौला अली को फ़तह से महरूम कर दिया। और फ़ैसला हो जाने के बाद ख़ुद ही फ़ैसले से पलटे हुए, फ़ैसले को मानने से इंकार कर दिया। और जो लोग यह फ़ैसला मान रहे थे उनको काफ़िर समझने लगे। आगे चाल कर यही लोग 'ख़वारिज', 'ख़ारिजी' कहलाए और मौला अली के जानी दुश्मन हो गए। यहाँ तक कि मौला अली को क़त्ल कर दिया।

सन 35 हिजरी, हज़रत उस्मान के क़त्ल के बाद अवाम ने मौला अली को अपना ख़लीफ़ा चुना। लेकिन मुल्क-ए-शाम के गवर्नर अमीर मुआविया ने मौला अली को ख़लीफ़ा मानने से इंकार कर दिया। अमीर मुआविया का कहना था कि पहले क़ातिल-ए-उस्मान से बदला लिया जाए।

दूसरी तरफ़ मक्का से हज कर के वापस आ रही आयशा सिद्दीका को कुछ विरोधियों ने हज़रत उस्मान के बेरहमी से हुए क़त्ल की ख़बर को बढ़ा-चढ़ा कर पेश किया और आयशा सिद्दीका को यह यकीन दिलाया कि हज़रत उस्मान के क़त्ल के लिए मौला अली ज़िम्मेदार हैं। जिसके नतीज़े में 'जंग-ए-जमल' पेश आई। इस जंग में हज़ारों की तादात में सहाबा, मुसलमान व इस्लाम की दो अज़ीम शख्सियतें हज़रत तल्हा व हज़रत ज़ुबैर भी शहीद हो गए। जंग को ख़त्म कर मौला अली ने आयशा सिद्दीका व आपके काफ़िले को बा-इज़्ज़त मदीने रवाना कर दिया।[1]

उधर मुल्क-ए-शाम (सीरिया) में नौमान बिन बशीर, अमीर मुआविया के पास, हज़रत उस्मान की खून से लथ-पथ कमीज़ और आपकी बीवी मोहतरमा नाईला की कटी हुई उँगलियों को ले आया,

और दमिश्क़ के बाज़ार में लटका दिया। जब अवाम ने यह मंज़र देखा तो वो आग बबूला हो गई। क्योंकि हज़रत उस्मान के क़त्ल की ख़बर से दमिश्क़ की आवाम पहले ही ग़मज़दा और ग़ुस्से में थी। और दमिश्क़ में यह बात भी गर्म थी कि हज़रत उस्मान के क़त्ल में मौला अली भी शामिल हैं। अवाम में ग़म व ग़ुस्सा और अमीर मुआविया का मौला अली को ख़लीफ़ा मानने से इंकार करने के साथ-साथ, मौला अली द्वारा नियुक्त किए गए नये गवर्नर सहल बिन हनीफ़ को गवर्नर माने से इंकार कर खुद ही मुल्क-ए-शाम (सीरिया) का गवर्नर बने रहे।[2] जिसके सबब एक जंग का आगाज हुआ, जिसको इस्लाम के इतिहास में जंग-ए-सिफ़्फ़ीन के नाम से जाना जाता है। जंग-ए-सिफ़्फ़ीन में मौला अली और अमीर मुआविया की बीच एक जबरदस्त लड़ाई हुई।

जंग-ए-सिफ़्फ़ीन में भी हज़ारों सहाबा, मुसलमान शहीद हुए। इन शहीद होने वालों में सबसे अहम शख़्सियत अम्मार बिन यासिर की थी। जो कि मौला अली की तरफ़ से लड़ रहे थे। अम्मार बिन यासिर के मुताल्लिक़ रसूल अल्लाह मुहम्मद ﷺ ने भविष्यवाणी की थी कि -

> “....अफ़सोस ! अम्मार को एक बाग़ी जमात क़त्ल करेगी। जिसे अम्मार जन्नत की दावत दे रहा होगा, और वो जहन्नुम की दावत दे रही होगी....।”[3]

मौला अली की फौज़ के सामने जब अमीर मुआविया की फौज़ के क़दम उखड़ने लगे तो, फौज़ के कमांडर अम्र बिन आस ने अमीर मुआविया को मशवरा दिया कि, अगर हम क़ुरआन को नेजों पर उठा लें और और कहें कि हमारे और तुम्हारे दरमियान यह क़ुरआन हकम है। तो कुछ कहेंगे कि यह बात मान ली जाए। और कुछ इससे इंकार करेंगे। यहाँ तक कि फौज़ में फूट पड़ जायेगी, और हमें जंग में मोहलत मिल जायेगी। कमांडर अम्र बिन आस के इस मशवरे को अमीर मुआविया ने मन लिया और क़ुरआन नेजों पर उठा लिए गए। इस अमल का नतीज़ा वो ही निकला जिसकी उम्मीद थी। मौला अली की फौज़ के इराक़ी सिपाहियों ने जंग रोक कर बात-चीत करने का फ़ैसला लिया, और लोग़ जंग जारी रखने पर आमादा रहे। जिससे फौज़ में फूट पड़ गई। मौला अली इस चाल से वाकिफ़ थे, आपने समझाया कि हम फ़तह के बहुत करीब हैं, यह सब चाल है। लेकिन इराक़ी सिपाहियों की ज़िद के आगे मौला अली को जंग बंद कर के बात-चीत के अमल पर राज़ी होना पड़ा।[4]

बात-चीत के अमल में यह तय पाया गया कि मौला अली और अमीर मुआविया यानी दोनों तरफ से एक-एक शख़्स को मीडिएटर चुन लिया जाए। यह दोनों मीडिएटर जो भी फ़ैसला करेंगे वो माना जायेगा। अमीर मुआविया की तरफ से उनके कमांडर अम्र बिन आस को मीडिएटर चुन लिया

गया। मौला अली ने अपनी तरफ से अब्दुल्लाह इब्न अब्बास को मीडिएटर चुना तो लोगों ने ख़ारिज कर दिया। अब्दुल्लाह इब्न अब्बास के बाद मौला अली ने मालिक अश्तर को चुना तो, इन पर भी लोग राज़ी न हुए और आख़िरकार मूसा अशअरी को मौला अली की तरफ से मीडिएटर चुना गया। लेकिम मौला अली, मूसा अशअरी पर राज़ी न थे। मीडिएटर चुन लेने के बाद दोनों मीडिएटरों को आठ महीनों का वक़्त दिया गया। ताकि दोनों मीडिएटर जो कुछ अल्लाह की किताब 'क़ुरआन' में पाएँ उस पर अमल करें, और कुछ क़ुरआन में न पाएँ तो, सुन्नत-ए-आदिला पर अमल करते हुए बेहतर राह निकालें ताकि जंग का ख़ात्मा किया जा सके।[5]

इन आठ महीनों के लम्बे वक़्त में दोनों मीडिएटरों ने यह तय पाया कि मौला अली और अमीर मुआविया दोनों को ही ख़िलाफ़त से हट जाना चाहिए और मुसलामानों को किसी तीसरे ख़लीफ़ा का चुनाव कर लेना चाहिए।

आठ महीने बाद 'दुमत-उल-जंदल' जगह पर इन दोनों मीडिएटरों ने मौला अली, अमीर मुआविया और इनकी फौजों के सामने अपना फैसला सुनाया तो, अमीर मुआविया के मीडिएटर अम्र बिन आस ने चालाकी से काम लिया और जैसा फ़ैसला तय पाया था, उसके ख़िलाफ़ फ़ैसला सुनाया–

"अब मैं कहता हूँ कि मुआविया ख़लीफ़ा हैं। और मैं इनकी ख़िलाफ़त पर राज़ी हूँ, और मुआविया को ख़िलाफ़त पर बरकरार करता हूँ।"[6]

इस फ़ैसले से यह साफ़-साफ़ ज़ाहिर हो गया कि क़ुरआन को नेज़ो पर उठाना सिर्फ़ और सिर्फ़ एक शाज़िश थी। अब इराक़ी सिपाहियों को इस बात का एहसास हुआ कि मौला अली ठीक कह रहे थे कि क़ुरआन को नेजों पर उठाना और क़ुरआन को हकम बनाने वाली बात एक चाल के सिवा कुछ भी नहीं। लेकिन अब तो मीडिएटरों ने अपना फ़ैसला सुना दिया था। इस तरह जंग-ए-सिफ़्फ़ीन का अंत हुआ। अमीर मुआविया जो कि मौला अली के मुकाबले में हारने के मुहाने पर खड़े थे, महफ़ूज़ हो गए। मौला अली की फौज़ के कुछ सिपाहियों ने अपनी ज़िद के आगे मौला अली को फ़तह से महरूम कर दिया। और फ़िर यही लोग फ़ैसला हो जाने के बाद ख़ुद ही फ़ैसले से पलट गए। फ़ैसले को मानने से इंकार करने लगे, और जो लोग यह फ़ैसला मान रहे थे उनको काफ़िर समझने लगे। आगे चाल कर यही लोग 'ख़वारिज','ख़ारजी' कहलाए और मौला अली के जानी दुश्मन हो गए। दुश्मनी इतनी बढ़ी कि इस्लाम के इतिहास की एक और जंग, 'जंग-ए-नहरवान' का होना तय पाया।

सन 38 हिजरी में जंग-ए-नहरवान हुई। इस जंग का कारण जंग-ए-सिफ़्फ़ीन में हुआ छल-कपट था जोकि इराक़ी सिपाहियों की ज़िद की वज़ह से अमल में आया था। और अब यही इराक़ी सिपाही अमीर मुआविया से जंग करना चाहते थे। मौला अली ने इन लोगों का साथ देने से मना कर दिया। मौला अली का कहना था कि मैंने तो सिफ़्फ़ीन के दिन ही तुमसे कह दिया था कि क़ुरआन जो इन लोगों ने नेजों पर उठाये हैं, यह धोका और चाल है। तुम इसकी परवाह न करो, और इनसे लड़ों। लेकिन तुम न माने। मैं चुप हो गया। अब मैं अपने वादे को नहीं तोड़ सकता। मौला अली की यह बात सुनकर, यह लोग आपके बाग़ी हो गए। और आपस में मशवरा किया कि जो शख़्स अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ हुक्मरानी न करे, वो काफ़िर है। अमीर मुआविया ने छल-कपट किया और मौला अली इनसे जंग नहीं करते और सज़ा भी नहीं देते हैं। इसलिए मौला अली भी काफ़िर हैं। और उनका क़त्ल करना चाहिए। इसी अमल और सोच की वज़ह से यह जमात ख़वारिज के नाम से जानी जाती है।

ख़वारिज की बागियाना और कातिलाना सरगर्मियां बढ़ती जा रही थीं। जिसको अमली जामा पहनाने के लिए लगभग 4000 ख़वारिज बग़दाद के पास 'नहरवान' की जगह पर इकठ्ठा हुए। इस सरगर्मी की ख़बर जब मौला अली को लगी तो, आपने नहरवान पहुँच कर ख़वारिज की इस्लाह की, लेकिन बहुत कम ख़वारिज ही अपनी इस्लाह में कामयाब रहे। बाक़ी ख़वारिज ने मौला अली से जंग की, क़त्ल हुए और बुरी तरह से शिकस्त पाई। लेकिन यह शिकस्तयाफ़्ता ख़वारिज छुप-छुप कर अपने मक़सद और सरगर्मियों में लगे रहे।

सन 40 हिजरी, शिकस्तयाफ़्ता खवारिज़ो में से तीन ख़वारिज अब्दुर्रहमान इब्न मुलजिम, बरक इब्न अब्दुल्लाह और अम्र बिन बक्र ने मौला अली, अमीर मुआविया और अम्र बिन आस को क़त्ल करने की क़सम उठाई। अब्दुर्रहमान इब्न मुलजिम ने, कूफ़ा में हज़रत अली को, बरक इब्न अब्दुल्लाह ने दमिश्क़ में अमीर मुआविया को, और अम्र बिन बक्र ने अम्र बिन आस को मिस्र की मस्जिद में 17-19 रमज़ान को, फज्र की नमाज़ में क़त्ल करने का ज़िम्मा लिया। अपनी ज़िम्मेदारी को निभाने यह तीनों लोग कूफ़ा, दमिश्क़ और मिस्र के लिए रवाना हो गए।

दमिश्क़ की मस्जिद में बरक इब्न अब्दुल्लाह ने अमीर मुआविया पर क़ातिलाना हमला किया, जिसमें वो नाकाम रहा और अमीर मुआविया ज़ख़्मी हो गए। वही दूसरी तरफ मिस्र में अम्र बिन आस को क़त्ल करने में अम्र बिन बक्र भी नाकाम ही रहा क्योंकि अम्र बिन आस की तबियत ख़राब होने के कारण उन्होंने अपनी जगह किसी दूसरे शख़्स को नमाज़ पढ़ाने मुसल्ले पर भेज दिया था। लेकिन अम्र बिन बक्र ने उस शख़्स को ही अम्र बिन आस समझ कर क़त्ल कर डाला।[7]

19 रमज़ान, मौला अली को क़त्ल करने के इरादे से अब्दुर्रहमान इब्न मुलजिम अपने दो साथियों दरदान और शबीब के साथ कूफ़ा की मस्जिद में पहुँचा और जब मौला अली मस्जिद में तशरीफ़ लाए तो ज़हर में बुझी तलवार से आप पर क़ातिलाना हमला कर दिया। हमले में मौला अली शदीद ज़ख़्मी हो गए और अब्दुर्रहमान इब्न मुलजिम को गिरफ़्तार कर लिया गया।

ज़ख़्मी होने के बाद मौला अली ने फ़रमाया अगर मैं इस हमले में मर जाऊँ तो, तुम भी इसको क़त्ल कर डालना। अगर मैं बच गया तो, जैसा में सही समझूँगा करूँगा। और ऐ अब्दुल मुत्तलिब की औलादों ! ख़ूँरेजी की बात लोगों से न करना और यह बात अमल में न लाना कि अमीरुल मोमिनीन क़त्ल हो गए हैं। सिवाए मेरे क़ातिल के किसी और का क़त्ल न करना। ऐ हसन ! अगर मैं इस ज़ख़्म से मर जाऊँ तो, तुम भी इसी तलवार से अब्दुर्रहमान इब्न मुलजिम पर सिर्फ एक वार करना। और फिर मौला अली ने इमाम हसन व हुसैन को नसीहतें और वसीयतें की।[8]

21 रमज़ान, और इस तरह अपनी आख़री नसीहतों और वसीयतों के साथ इस दुनिया से एक सबसे बड़ा आलिम, सबसे बड़ा फिलॉस्फर, सबसे बड़ा बहादुर, सबसे बड़ा इमानदार, सबसे बड़ा ख़ुदापरस्त और सबसे बड़ा सूफी व मौला शहीद होकर अपने मालिक-ए-हक़ीक़ी से जा मिला।

"इन्ना लिल्लाही वा इन्ना इलैही राजिऊन"

फ़रीद अहमद

हल्द्वानी (नैनीताल) उत्तराखण्ड

uk.fareed@outlook.com

https://tarjumaan.blogspot.com/

---

[1]मुहर्रम नामा, ख़्वाजा हसन निज़ामी, हल्का माशाइख़ बुक डिपो,दिल्ली, भारत, एडिशन-6, जुलाई 1926 ई०, स०- 47,61,63.

[2]इब्न अल असीर, जिल्द 3 स०-98. अल बिदाया, जिल्द-7, स०-227. तारीख़-ए-इब्न खुल्दून, जिल्द-2, स०-169. ख़िलाफ़त ओ मुलूकिय्यत, स०- 132.

[3]सही बुखारी-447, 2812

[4]अल तिबरी, जिल्द-4, स०-34-36. इब्न अल असीर, जिल्द 3 स०-161-162. अल बिदाया, जिल्द-7, स०-275-276. तारीख़-ए-इब्न खुल्दून, जिल्द-2, स०-175.

[5]अल तिबरी, जिल्द-4, स०-28. अल बिदाया, जिल्द-7, स०-276. ख़िलाफ़त ओ मुलूकिय्यत, स०- 140

[6]ख़िलाफ़त ओ मुलूकिय्यत, स०- 142. अल तिबरी, जिल्द-4, स०-51. इब्न साद, जिल्द-4, स०-256-257. इब्न अल असीर, जिल्द-2 स०-168. अल बिदाया, जिल्द-7, स०-282. तारीख़-ए-इब्न खुल्दून, जिल्द-2, स०-178.

[7]मुहर्रम नामा, ख़्वाजा हसन निज़ामी, हिंदी अनुवाद-फ़रीद अहमद, अल्ट्रा क्रिएशन्स पब्लिकेशन, हल्द्वानी, भारत, 2023, स०-57-58.

[8]तारीख़-ए-इब्न खुल्दून,अल फैसल नाशिरान,लाहौर, पाकिस्तान 2004, जिल्द-2, स०-615.

कॉपीराइट © 2024 सर्वाधिकार सुरक्षित

मूल लेख़, लेखक व प्रकाशक के पास सर्वाधिकार सुरक्षित है। पूर्व लिखित अनुमति के बिना किसी भी अन्य नाम,माध्यम तथा अन्य भाषा में प्रकाशित व प्रसारित नहीं किया जा सकता है।